बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 103

कथनी को करनी में बदलें

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने बिश्केक में आयोजित शांघाई सहयोग संगठन (एससीओ) सम्मेलन में खुले एवं गतिरोध रहित व्यापार की अहमियत और विश्व व्यापार संगठन की जरूरत के भारत के रुख को दोहराया। अब तक भारत ने कुछ देशों के बीच कारोबारी समझौतों से ज्यादा बहुपक्षीय समझौतों का समर्थन किया है। मोदी ने शुक्रवार को सम्मेलन को संबोधित करते हुए एकपक्षीयता और कारोबारी संरक्षणवाद पर कड़ा प्रहार किया। उन्होंने अमेरिका और चीन के बीच बढ़ते व्यापार युद्ध की पृष्ठभूमि में कहा कि नियम आधारित, भेदभाव रहित और सर्व समावेशी डब्ल्यूटीओ केंद्रित बहुपक्षीय कारोबारी व्यवस्था की जरूरत है। मोदी ने पिछले साल दावोस में विश्व आर्थिक मंच की बैठक में भी देशों को अपनी अर्थव्यवस्था बंद करने के लिए चेताया था। उन्होंने कहा था कि वैश्वीकरण के खिलाफ संरक्षणवादी ताकतें अपना सिर उठा रही हैं।

लेकिन मोदी सरकार को अपनी कथनी को करनी में बदलना होगा क्योंकि भारत ने भी मुफ्त व्यापार के समर्थन के मामले में अच्छा उदाहरण कायम नहीं किया है। पिछले कुछ वर्षों के दौरान भारत में संरक्षणवादी रुझान बढ़ा है और हाल के बजटों में घरेलू उद्योग को बचाने के लिए शुल्कों में बढ़ोतरी देखने को मिली है। भारत की औद्योगिक नीति के बहुत से पहलू ठीक से नहीं बनाए गए हैं और ये डब्ल्यूटीओ के नियमों का उल्लंघन कर सकते हैं। हाल में जापान भारत को उन कदमों के लिए डब्ल्यूटीओ में लेकर गया है, जो मोबाइलों के घरेलू उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए बनाए गए थे। यह भारत के स्तर पर कारोबारी कूटनीति की दुर्भाग्यपूर्ण नाकामी है।

अमेरिका ने तरजीह की सामान्य प्रणाली कार्यक्रम के तहत कुछ भारतीय निर्यातकों को मिलने वाले विशेषाधिकार खत्म कर दिए हैं। इस कार्यक्रम के तहत निर्यातकों को अमेरिकी बाजार में बिना शुल्क के अपना माल बेचने की मंजूरी मिलती है। भारत ई-कॉमर्स और आईटी सहित बहुराष्ट्रीय कंपनियों के परिचालन को नियंत्रित कर खुद को अमेरिका के निशाने पर ला रहा है। हाल में विकासशील देशों के वाणिज्य मंत्रियों की नई दिल्ली में बैठक हुई। उनमें से बहुत कम ने डब्ल्यूटीओ के उस बहुपक्षीय खाके पर चर्चा को रोकने की भारत की चाहत का समर्थन किया, जो अंतरराष्ट्रीय ई-कॉमर्स को विनियमित करेगा। भारत एक बार फिर अलग-थलग पड़ गया।

भारत का यह रुख इसलिए दुर्भाग्यपूर्ण है क्योंकि भारतीय अर्थव्यवस्था को वैश्विक अर्थव्यवस्था के साथ जुड़कर बहुत कुछ हासिल करना है। वैश्विक आपूर्ति शृंखला के लिए खुलकर ही निर्यात में सुधार और उससे निरंतर एवं अच्छे वेतन वाले रोजगार अवसरों की उम्मीद की जा सकती है। चीन और अमेरिका के बीच व्यापार युद्ध को अलग रूप में देखने की जरूरत नहीं है। यह उस अंतरराष्ट्रीय व्यापार के लिए एक नया और पारदर्शी ढांचा तैयार करने की कोशिश का हिस्सा है, जो चीन की अर्थव्यवस्था में छिपी सब्सिडी पर रोक लगाता है। चीनी अर्थव्यवस्था ने वैश्विक कारोबारी प्रणाली को तोड़ा-मरोड़ा है। यह भारत के लिए भी चिंता की बात है और उसे नई कारोबारी इमारत को आकार देने में मदद लेनी चाहिए, बजाय उससे निकलने के। भारत को वैश्विक मूल्य शृंखला का हिस्सा बनना चाहिए और खुद को वैश्विक अर्थव्यवस्था के साथ जोड़ना चाहिए। भारत के निर्यात को पहले ही तगड़ा झटका लग चुका है, जो पिछले पांच वर्षों से सपाट है। बांग्लादेश और वियतनाम जैसे अन्य निर्यातक देशों ने वैश्विक व्यापार में बढ़ोतरी से पैदा हुए अवसर लपक लिए हैं।

सरकार के बहुत से कदमों से सवाल पैदा होते हैं कि क्या भारत अब भी बाजार अनुकूल सुधारों पर आगे बढ़ रहा है या वह बीते वर्षों के नाकाम आयात विकल्प मॉडल पर लौटने को तरजीह दे रहा है। अगर नई सरकार और वाणिज्य मंत्री ने खुद को खुलेपन के लिए नहीं ढाला तो भारत फिर मौका चूक जाएगा।

विनय सिन्हा

गुजरात मॉडल की वापसी

नरेंद्र मोदी का प्रधानमंत्री कार्यालय अमेरिकी राष्ट्रपति के कार्यकारी कार्यालय की झलक पेश करता है। वह अपनी चुनिंदा अफसरशाहों की 'कैबिनेट' के माध्यम से शासन करेंगे।

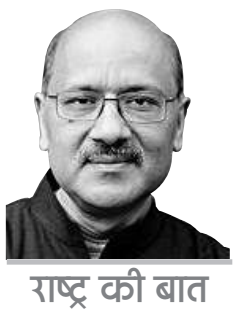

राष्ट्र की बात

शेखर गुप्ता

मोदी-शाह के नेतृत्व वाली भारतीय जनता पार्टी का सत्ता प्रतिष्ठान उनकी कार्यशैली के लिए गुजरात मॉडल जैसे जुमले का इस्तेमाल करने वालों को पसंद करता है। उनके विरोधियों ने इसे सन 2002 के बाद की ध्रुवीकरण की राजनीति से जोड़ दिया है और वे इसका यही अर्थ निकालते हैं।

परंतु गुजरात मॉडल की एक कम विवादित अभिव्यक्ति भी है और वह है केंद्रीकृत शासन। प्रधानमंत्री कार्यालय में हुए नए बदलाव इसकी बानगी हैं। प्रधानमंत्री के तीन प्रमुख सहायकों को कैबिनेट मंत्री का दर्जा दिया गया है जो स्वयं में एक नई नजीर है। मोदी जिस प्रकार गुजरात में शासन करते थे, यह उसका स्वाभाविक विस्तार है। सहजता के लिए हम इसे प्रशासन का मोदी मॉडल कहकर पुकारेंगे। इसकी शुरुआत गुजरात में 2001-02 में हुई। 2002 से 2012 के बीच उनके दो पूर्ण कार्यकाल और 2001-02 और 2012-14 के दो अधूरे कार्यकाल के दौरान यह विकसित हुआ और उनके साथ दिल्ली तक आया। प्रधानमंत्री के रूप में उनके दूसरे कार्यकाल ने इसे और बल दिया है। अगर आप जोखिम से बचते हैं तो आप म्युचुअल फंड की उस चेतावनी का इस्तेमाल कर सकते हैं कि अतीत का प्रदर्शन भविष्य के बेहतर प्रदर्शन की गारंटी नहीं है। परंतु हम जैसे राजनीतिक विश्लेषकों को ऐसा बचाव उपलब्ध नहीं होता है क्योंकि हमारे प्रकाशित शब्द तुरंत जनता की नजर मे आ जाते हैं। जहां तक मोदी की बात है, उनके भविष्य के कदमों को अतीत से जोड़कर देखना अब तक कामयाब साबित हुआ है। विस्तृत ब्योरों में बदलाव हो सकता है लेकिन बुनियादी बातें समान हैं।

मोदी मॉडल के पांच अहम तत्त्व इस प्रकार हैं:

1. सुप्रीमो यानी प्रमुख अपने वफादार सहायकों की मदद से पार्टी पर पूरा नियंत्रण रखेंगे।

2. चुनिंदा अफसरशाहों की सहायता से शासन होगा और सेवानिवृत्ति आड़े नहीं आएगी।

3. मिशन की तरह शासन करना जहां कुछ ऐसे विचार हों जो एक कार्यकाल में नजर आ सकें, जिन्हें कतिपय चुने हुए लोग अंजाम दे सकें।

4. बड़ा वैचारिक परिदृश्य कभी नजरों से ओझल न हो।

5. हर प्रकार के भीतरी और बाहरी विपक्ष को साम-दाम-दंड और भेद के जरिये निष्क्रिय करना।

गुजरात मझोले आकार का और कम विविधता वाला प्रांत था और वहां यह एकदम सफल रहा। पूरे देश में इसकी सफलता को लेकर संदेह थे। कई बार यह संदेह उभरकर सामने भी आया। उदाहरण के लिए नोटबंदी, विदेश नीति के मोर्चे पर कुछ झटकों, खासतौर पर शुरुआती जोश के बाद अपने पड़ोसी देशों को लेकर, वृद्धि में गिरावट, रोजगार की क्षति और 2017 के गुजरात के एकदम करीबी नतीजों वाले चुनाव के समय ऐसा हुआ। परंतु अंततः नतीजे ही मायने रखते हैं और आम चुनाव में भाजपा को 303 सीट हासिल हुईं। तमाम अन्य राजधानियों की तरह दिल्ली की प्राथमिक भावना भी अफसरशाही की है। मोदी के पास अपने तीन सहायकों की पदोन्नति के अलावा कोई चारा नहीं था। विदेश सेवा के पूर्व अधिकारी एस जयशंकर को विदेश मंत्री बनाने के बाद उन पर दबाव था कि वह राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार और पूर्व आईपीएस अधिकारी अजीत डोभाल का दर्जा बढ़ाएं ताकि किसी असहज स्थिति से बचा जा सके।

डोभाल को प्रोन्नत करने के बाद नृपेंद्र मिश्रा और पी के मिश्रा की पदोन्नति अनिवार्य थी। यह केवल प्रोटोकॉल की जरूरत के चलते किया गया। अतीत में भी गैर मंत्रियों को कैबिनेट दर्जा दिया गया है। योजना आयोग और नीति आयोग के अध्यक्ष और संप्रग-2 में यूआईडीएआई के प्रमुख के रूप में नंदन नीलेकणी को यह दर्जा दिया गया।

यह विश्लेषण तीन कारणों से निरर्थक लगता है। पहला, मोदी के राज में ऐसी बातें अतार्किक हैं। दूसरा, इनसे लगता है मोदी को यह सब दबाव में करना पड़ा। ऐसा कोई प्रमाण नहीं है जिससे लगे कि मोदी कभी दबाव में काम करते हैं। अफसरशाही के मामले में तो कतई नहीं। इतने प्रचंड बहुमत के बाद वह ऐसा क्यों करेंगे? तीसरी बात, जयशंकर के चयन में उन पर कोई दबाव नहीं था। वह एक बड़ी योजना के तहत किया गया और बाकी कदम उस योजना का हिस्सा हैं। यह पीएमओ अमेरिकी राष्ट्रपति के कार्यकारी कार्यालय की तरह है जहां प्रमुख कैबिनेट मंत्रियों की शक्तियों का प्रयोग यहीं से होता है। मोदी के पहले कार्यकाल में विदेश से लेकर स्वच्छता तक अहम मंत्रालयों पर यहां से सीधे नियंत्रण किया गया। अब इसके नेतृत्वकर्ताओं कैबिनेट मंत्रियों के दर्जे के साथ मोदी के लिए काम संभालेंगे। ब्रिटिश शैली की कैबिनेट व्यवस्था जहां प्रधानमंत्री समान लोगों में प्रथम होता है, उसे पीछे छोड़ दिया गया है। ऐसे अमेरिकी राष्ट्रपति के बारे में सोचिए जो अपने विश्वासपात्र राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार की मदद से विदेश और रक्षा विभाग संभाल रहा हो। जबकि यह सलाहकार समान शक्तिशाली व्हाइट हाउस के चीफ ऑफ स्टाफ को भी संभाल रहा हो। मोदी के मामले में दो चीफ ऑफ स्टाफ हैं।

इंदिरा गांधी ने सन 1971 में प्रमुख सचिव पद की शुरुआत की और पीएन हक्सर को नियुक्ति दी। उनके बाद मोरारजी देसाई ने वी शंकर को इस पद पर नियुक्त किया। चरण सिंह की जनता सरकार ने इस पद को समाप्त किया लेकिन सन 1980 में इंदिरा गांधी के साथ इसकी भी वापसी हो गई। इस बार उन्होंने पीसी एलेक्जेंडर को प्रमुख सचिव बनाया। सन 1977 के पहले तक इंदिरा गांधी के मंत्रिमंडल में जगजीवन राम समेत कुछ शक्तिशाली मंत्री थे लेकिन अब प्रणव मुखर्जी के अलावा ऐसा कोई नहीं था।

मोदी का दूसरा कार्यकाल काफी हद तक ऐसा ही है। पहली बात, वह पार्टी पर अमित शाह के जरिये नियंत्रण रखते हैं। दूसरा, इंदिरा गांधी का वैचारिक लक्ष्य निरंतरता का था, वहीं मोदी इससे अलग हैं। खासकर गांधी परिवार द्वारा परिभाषित भारतीय धर्मनिरपेक्षता की परिभाषा को लेकर। चुनाव परिणाम के दिन पार्टी को संबोधित अपने पहले भाषण में उन्होंने यह बात जाहिर की। तीसरा, उनका कोई परिवार नहीं है। उस लिहाज से भी उनकी तुलना अमेरिकी राष्ट्रपति से हो सकती है। उनका कार्यकाल असीमित भी नहीं है और अमेरिकी राष्ट्रपति की तरह दो कार्यकाल तक सीमित भी नहीं है। उनकी जगह पार्टी का कोई अन्य नेता लेगा, कोई मोदी नहीं।

मोदी सरकार के पहले कार्यकाल में प्रतिभाओं की कमी की आलोचना होती रही। मैंने भी इसे आजाद भारत की प्रतिभा से सर्वाधिक विमुख सरकार बताया था। उस वक्त उनके करीबियों की दलील थी कि प्रतिभा और अनुभव नहीं है तो क्या, हम सीख लेंगे लेकिन सत्ता हासिल कर उसे दूसरों को तोहफे में नहीं देंगे।

यह टीम बनाने की वाजपेयी की शैली का अंत है। उन्होंने हर जगह से प्रतिभा जुटाई थी। जसवंत सिंह आरएसएस से नहीं थे, यशवंत सिन्हा और रंगराजन कुमारमंगलम तत्काल ही भाजपा में आए थे, जॉर्ज फर्नांडिस भाजपा-कांग्रेस गठबंधन वाली सरकार की सुरक्षा संबंधी कैबिनेट समिति के पहले और आखिरी गैर भाजपाई-गैर कांग्रेसी मंत्री थे। अरुण शौरी परिवर्तन के शक्तिशाली माध्यम थे जो बाहर से अपनी ईमानदारी और बौद्धिक क्षमता लेकर आए।

मोदी और शाह ने पहले कार्यकाल में इसका उलट किया। वह बाहरियों को राजनीतिक अवसर देने के खिलाफ थे। पेशेवरों, विशेषज्ञों और तकनीकविदों पर भी उन्हें भरोसा नहीं था। बेहतरीन अकादमिक करियर वाले दो आरबीआई गवर्नरों की हालत इसका उदाहरण है। हम जैसे आलोचकों को पुरातन विचार का कहकर या यह कहकर खारिज कर दिया गया कि हम ऐसी सरकार को स्वीकार नहीं कर पा रहे हैं जो दिल्ली के बुर्जुआ चेहरों के बिना बनी है। हालांकि चौथे वर्ष तक अर्थव्यवस्था की स्थिति खराब हो गई और कुछ विधानसभा चुनावों और उपचुनावों के बाद बदलाव के चिह्न दिखने लगे। पूर्व अफसरशाहों आर के सिंह और हरदीप पुरी को सरकार में शामिल किया गया। इन दोनों ने अपना कद बढ़ाया।

ऐसे में जयशंकर की नियुक्ति को एक बड़े बदलाव के रूप में देखा जा सकता है। पीएमओ में उपर्युक्त त्रिमूर्ति की तरक्की भी इसकी बानगी है। स्वच्छता और जल एवं आयुष्मान भारत कार्यक्रम प्रधानमंत्री मोदी के दिल और राजनीति दोनों के करीब हैं। इनका दायित्व दो पूर्व अफसरशाहों परमेश्वरन अय्यर और इंदु भूषण के पास है। दोनों को विश्व बैंक और एडीबी से वापस लाया गया है। आज का मोदी मॉडल वही है जो पहले गुजरात में था। परंतु ऐसा करते हुए भी यह माना जा रहा है कि देश का शासन गुजरात के शासन से कठिन है। इसके लिए जरूरी प्रतिभा केवल भाजपा में मौजूद नहीं है और मोदी बाहर से भी उसे लाएंगे लेकिन केवल ऐसे लोगों को जिन पर उन्हें भरोसा रहा है। इसलिए सुपर अफसरशाहों के माध्यम से चलाए जाने वाले इस कार्यकाल पर नजर रखिए।

कृषि क्षेत्र पर राज्यों के बेरोकटोक नियंत्रण पर अंकुश की जरूरत

खेती-बाड़ी

सुरिंदर सूद

किसानों के लाभ के लिए सभी राजनीतिक दलों को कृषि को राज्य सूची से स्थानांतरित कर समवर्ती सूची में रखने के लिए एक और संविधान संशोधन को समर्थन देना चाहिए।

किसानों की समस्याओं पर गठित एम एस स्वामीनाथन की अध्यक्षता वाले राष्ट्रीय आयोग (नैशनल कमीशन ऑन फार्मर्स) ने कृषि क्षेत्र को राज्य सूची से स्थानांतरित कर समवर्ती सूची में रखने की सिफारिश की थी। अफसोस की बात है कि इस महत्त्वपूर्ण सिफारिश पर उतना ध्यान नहीं दिया गया है, जितनी जरूरत थी। कृषि विषय अगर समवर्ती सूची में लाया जाता है तो इससे कृषि एवं किसानों से जुड़े मसलों पर केंद्र सरकार अपेक्षाकृत अधिक निर्णायक कदम उठा पाएगी, साथ ही राज्य सरकारों के अधिकारों पर भी कोई खास असर नहीं होगा। फिलहाल केंद्र को उन कृषि विकास एवं किसानों के लिए कल्याणकारी योजनाओं के क्रियान्वयन के लिए भी राज्य सरकारों पर निर्भर रहना पड़ता है, जिनका वित्त पोषण यह स्वयं कर रहा है।

वास्तव में कृषि क्षेत्र को राज्य सरकार की मर्जी पर छोड़ना भारत सरकार अधिनियम, 1935 की 'देन' कही जा सकती है। उस समय इसके पीछे तर्क यह दिया गया था कि चूंकि, कृषि क्षेत्र विशेष पेशा है और मुख्य तौर पर स्थानीय कृषि-पारिस्थितिकी वातावरण और मूल स्थानों पर उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर है, इसलिए प्रांतीय सरकारें इस क्षेत्र की बेहतर देखभाल कर सकती हैं। उन दिनों कृषि कार्य केवल खाद्य जरूरतें पूरी करने के लिए किए होते थे और खाद्यान्न की खरीद-बिक्री सीमित स्तर पर होती थी। किसानों से जुड़ीं समस्याएं भी स्थानीय स्तर तक ही सीमित थीं।

आधुनिक समय में परिस्थितियां काफी बदल गई हैं। आधुनिक समय में कृषि क्षेत्रीय सीमाओं में बंधा नहीं रह गया है और अब राज्यों के बीच व्यापारिक सौदे इसका हिस्सा बन गए हैं। इतना ही नहीं, कृषि अब अर्थव्यवस्था के दूसरे क्षेत्रों खासकर व्यापार, उद्योग और सेवा से भी जुड़ गया है। अब कोई एक राज्य कृषि के संबंध में कोई निर्णय लेता है तो इसका प्रभाव दूसरे राज्यों की कृषि-अर्थव्यवस्था पर भी देखा जाता है। लिहाजा कृषि क्षेत्रों पर राज्यों के बेरोकटोक नियंत्रण से समस्याएं खड़ी हो रही हैं और इनका प्रतिकूल असर पड़ रहा है।

स्वामीनाथन समिति की पांचवीं और अंतिम रिपोर्ट अक्टूबर 2006 में जारी हुई थी, जिसमें कृषि को समवर्ती सूची में स्थानांतरित करने का प्रस्ताव दिया गया था। रिपोर्ट में इस ओर ध्यान दिलाया गया था कि फसलों का समर्थन मूल्य, संस्थागत साख और कृषि-जिंस कारोबार-घरेलू एवं अंतरराष्ट्रीय- आदि से जुड़े निर्णय केंद्र सरकार द्वारा लिए जाते हैं। कुछ महत्त्वपूर्ण कानून, जिनका कृषि क्षेत्र पर व्यापक असर पड़ा है, संसद ने बनाए हैं, जो केंद्र की देख-रेख में काम करते हैं। पौधे की नस्लों की सुरक्षा एवं किसानों के अधिकार कानून, जैविक विविधता कानून और राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा कानून कुछ ऐसे ही उदाहरण हैं। इनके अलावा ग्रामीण ढांचा, सिंचाई एवं अन्य कृषि विकास कार्यक्रमों के लिए ज्यादातर राशि केंद्र ही मुहैया कराता है। आयोग ने कहा, 'कृषि समवर्ती सूची में आने से किसानों की सेवा और कृषि की संरक्षा केंद्र एवं राज्य दोनों का उत्तरदायित्व बन जाएंगे।'

कृषि को समवर्ती सूची में लाने की सिफारिश के पीछे कुछ और कारण भी हैं। कुछ राज्य सरकारों के असहयोग करने से किसानों की समस्याएं दूर करने एवं उनकी आय बढ़ाने के लिए शुरू की गईं केंद्र की कुछ योजनाएं अपेक्षित परिणाम नहीं दे पा रही हैं। उदाहरण के लिए फसल बीमा योजना, प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि (पीएम किसान) और प्रधानमंत्री अन्नदाता आय संरक्षण अभियान (पीएम आशा) कुछ ऐसी ही योजनाएं हैं, जिनका पूर्ण लाभ नहीं मिल पा रहा है। इतना ही नहीं, कृषि विपणन, जमीन पट्टा, अनुबंध आधारित कृषि आदि से जुड़े कुछ महत्त्वपूर्ण सुधार भी कुछ खास बदलाव नहीं ला पा रहे हैं। एक बार फिर कुछ राज्यों का असहयोग इसके लिए जिम्मेदार रहा है।

किसानों की आय दोगुनी करने की संभावनाएं तलाशने के लिए गठित दलवाई समिति ने भी कृषि विपणन को समवर्ती सूची में रखने पर जोर दिया है। समिति के अनुसार इससे कृषि मंडियों में व्यापक सुधार, इनकी परिचालन क्षमता में इजाफा और ग्रामीण विपणन तंत्र के विस्तार में केंद्र सरकार को आसानी होगी। दलवाई समिति की रिपोर्ट ने कृषि को समवर्ती सूची में स्थानांतरित करने की दलील और मजबूत कर दी है।

इससे पहले भी किसी विषय को एक सूची से दूसरी सूची में डालने के लिए संविधान में संशोधन हो चुके हैं। उदाहरण के लिए 1976 में 42वें संशोधन में वन एवं वन्यजीव सुरक्षा सहित पांच विषय राज्य से निकालकर समवर्ती सूची में डाल दिए गए। विषय की महत्ता और इससे मिलने वाले संभावित लाभों को देखते हुए सभी राजनीतिक दलों को कृषि को राज्य सूची से स्थानांतरित कर समवर्ती सूची में रखने के लिए एक और संविधान संशोधन को समर्थन देना चाहिए। कृषि और किसान दोनों इससे लाभान्वित होंगे।

कानाफूसी

उपचुनाव से जुड़े सवाल

उत्तर प्रदेश में योगी आदित्यनाथ के नेतृत्व वाली सरकार के तीन मंत्रियों सत्यदेव पचौरी, रीता बहुगुणा जोशी और एसपीएस बघेल ने लोकसभा का चुनाव जीतने में कामयाबी हासिल की है। इस वजह से प्रदेश की विधानसभा में तीन स्थान रिक्त हो गए हैं। इनके द्वारा विधानसभा में खाली की गई सीटों को भरने के लिए उपचुनाव होंगे। इन तीनों सीटों पर भारतीय जनता पार्टी, समाजवादी पार्टी और बहुजन समाज पार्टी की पैनी निगाह होगी। चुनावों को लेकर भाजपा के विधायकों के बीच उत्सुकता का वातावरण है। कई सवाल हैं जिनके जवाब की तलाश हर किसी को है। क्या समाजवादी पार्टी और बहुजन समाज पार्टी जो इस समय एक दूसरे को लेकर काफी सतर्कता बरत रही हैं, वापस एक साथ आएंगी? क्या अपने मतभेद भुलाकर प्रदेश के ये दोनों महत्त्वपूर्ण दल महागठबंधन में एक बार फिर से नई जान फूंकेंगे? या फिर अखिलेश यादव एक बार फिर अपने परिवार की दया पर निर्भर हो जाएंगे? इन सारी बातों का जवाब हमें बहुत जल्दी मिल जाएगा। चुनाव आयोग जैसे ही उपचुनाव की तारीख घोषित करेगा, वैसे ही इन सारे प्रश्नों के उत्तर हमारे सामने होंगे।

आपका पक्ष

रक्तदान के लिए प्रोत्साहन की जरूरत

विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा हर साल 14 जून को विश्व रक्तदान दिवस मनाया जाता है ताकि लोगों के बीच रक्तदान के प्रति जागरूकता लाई जा सके तथा वे रक्तदान करने में बढ़ चढ़कर अपना योगदान दें। इस वर्ष का रक्तदान दिवस रवांडा में मनाया गया और उन लोगों को भी धन्यवाद दिया गया जिन्होंने रक्तदान किया और दुनिया का सबसे परोपकारी कार्य किया। रक्तदाता की वजह से इंसान की जान बचाई जा सकती है। भारत में कई सरकारी-गैरसरकारी संगठन और कई ब्लड बैंक, रक्तदान शिविर के माध्यम से लोगों को रक्तदान करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं और कई लोग इस परोपकारी कार्य में शामिल होकर रक्तदान करते हैं। इसके बदले में ब्लड बैंक की ओर से उन्हें एक कार्ड मिलता है। यह कार्ड आपातकाल की स्थिति उन्हें और उनके परिवार के सदस्यों को रक्त उपलब्ध कराने की गारंटी देता है। फिर भी देश में रक्त की कमी की वजह से या समय पर रक्त नहीं मिल पाने की वजह से कई मरीजों की जान चली जाती है। देश में मांग के अनुसार रक्त की आपूर्ति नहीं हो पाती है। कई ब्लड बैंक संगठन समय पर रक्त मुहैया कराते हैं लेकिन उसकी कीमत इतनी अधिक होती है कि गरीब और मध्यम वर्गीय व्यक्ति इसे खरीद नहीं पाता है जिससे उसे इलाज छोड़ना पड़ता है या दुर्भाग्यवश मरीज की रक्त का कमी से जान चली जाती है। वर्तमान में रक्त से संबंधित बीमारियां बढ़ती जा रही हैं और देश में वाहन दुर्घटना के मामले भी बढ़ रहे हैं। इस वजह से रक्त की मांग देश में बढ़ रही है और सरकारी अस्पतालों में भी मरीजों के परिजनों से निजी रक्त संगठन से रक्त लाने को कहा जाता है। हालांकि रक्त की कालाबाजारी भी देखने को मिलती है। इसके लिए मुंह मांगी कीमत मांगी जाती है। सरकार को इस पर रोक लगाने के लिए कदम उठाने चाहिए। ऐसी व्यवस्था लानी चाहिए कि गरीब से गरीब व्यक्ति को कम दाम में रक्त मिल सके। सरकार को विज्ञापनों और शिविर लगाकर लोगों को रक्तदान के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए ताकि लोगों के बीच इसके प्रति जागरूकता आए।

देश में रक्तदान जीवनदान के प्रति जागरूकता लाने के लिए शिविर लगाए जाने चाहिए

निशांत महेश त्रिपाठी, नागपुर

पाकिस्तान के कथनी और करनी में अंतर

शांघाई सहयोग संगठन की बैठक में पाकिस्तान का कहना है कि वह आतंकवाद, अवैध कब्जे में लिए गए इलाके में सरकारी आतंक के खिलाफ है। लेकिन उसकी कथनी और करनी में अंतर है। जम्मू कश्मीर कभी भी पाकिस्तान का हिस्सा नहीं रहा है। इसके बावजूद पाकिस्तान जम्मू कश्मीर के कुछ हिस्से पर कब्जा करके बैठा है। इसके अलावा पाकिस्तान बलात पर कब्जा करके भारत विरोधी आतंकी गतिविधियों को संचालित करता आ रहा है। आतंक के विरुद्ध कार्रवाई का पाखंड भारत को परेशान करनेवाले अच्छे व बुरे आतंक में भेद के कारण जमीन पर दिखाई नहीं देता है। पाकिस्तान के विदेश मंत्री चर्चा के लिए प्रतीक्षा को तैयार हैं लेकिन अवांछित आतंकी कृत्य रोकने की बात करने को तैयार नहीं है।

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।